समकालीन समय में हिंदी गजल के क्षेत्र में अनूप वशिष्ठ की मौजूदगी एक ऐसी लौ के समान है जो अपने समय के समस्त अंधकार को अपने प्रकाश से मिटाने के लिए तत्पर है। अनूप वशिष्ठ अपने समय के सशक्त और अनूठे गजलकार हैं। अनूप वशिष्ठ जिस समय अपना लेखन कार्य आरंभ करते हैं वह समय भारतीय समाज के लिए उतार- चढ़ाव का समय था। इस समय भारतीय समाज पर **भूमंडलीकर** और**बाजारवाद** का तीव्र प्रभाव पड़ रहा था और इसकी अभिव्यक्ति वे अपनी गजलों में कर रहे थे। उन्होंने आपातकाल से लेकर अब तक के भारतीय समाज का प्रत्यक्ष अनुभव बड़ी ही सहजता और सजगता से किया है। दुष्यंत कुमार के बाद जिन गजलकारों ने हिंदी गजल परंपरा को आगे बढ़ाने का कार्य किया है उनमें अनूप वशिष्ठ का नाम अग्रणी है। गजलों के साथ-साथ अनूप वशिष्ठ ने कहानी, गीत, आलोचना आदि क्षेत्रों में अपनी लेखनी चलाई परंतु मुख्य रूप से गजलकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं और उनकी सक्रियता अभी भी बनी हुई है।

वो मुतमइन हैं कि पत्थर पिघल नहीं सकता
मैं बे-क़रार हूँ आवाज़ में असर के लिए।[i]

आवाज में जिस असर के लिए दुष्यंत कुमार कह रहे हैं,वह आवाज आज के दौर में वशिष्ठ अनूप की गजलों में सुनाई देती है। वशिष्ठ अनूप लगातार समसामयिक मुद्दों को अपनी गजलों के माध्यम से उठाते चले

आए हैं। दुष्यंत के बाद हिंदी गजल परंपरा को आगे बढ़ाने वाले गजलकारों में अनूप वशिष्ठ प्रमुख हस्ताक्षर हैं। जिन्होंने समाज के सभी समसामयिक विषयों को अपनी गजलों में स्थान दिया है। गजलों के साथ-साथ अनूप वशिष्ठ ने कहानी, गीत, आलोचना आदि क्षेत्रों में अपनी लेखनी चलाई परंतु मुख्य रूप से गजलकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

अनूप वशिष्ठ मानते हैं की ग़ज़ल का विषय नायिका की हुस्न की तारीफ नहीं है बल्कि समाज के समसामयिक विषयों का यथार्थ परक वर्णन है।**प्रभा दीक्षित** अपने एक आलेख मैं लिखती हैं- **"गजल आधुनिक युग में सामंती युग की बेजुबान दरबारी रखैल नर्तकी नही है, बल्कि आधुनिक आजाद औरत की तरह अदब की अन्य विधाओं की अग्रिम कतार में जन-जन की मुक्ति का परचम उठाए इंकलाब की घोषणा कर रही है।"**

कल गुफ्तगू थी हुस्न और इश्क़ की
भूखी जमात की पुकार आज है गज़ल
वह लाज जो लुटने को मजबूर है कही भी
चिथड़ों में सिमटती हुई वह लाज है ग़ज़ल
वह दर्द जो होंठो पर तड़पकर ही रह गया
उस दर्द की गर्जन भरी आवाज़ है ग़ज़ल
वह जुल्म जो सदियों से दरिंदो ने किया है
उस जुल्म के खिलाफ़ अब ऐतराज है गज़ल।[ii]

हिंदी विभाग, बीएचयू के प्रोफेसर **डॉ अवधेश प्रधान** लिखते हैं- "**वशिष्ठ अनूप की कविता ने गेय कल्पना के पंखों पर उडान भरते हुए अहर्निश प्रकृति, व्यक्ति और समाज के जीवंत जीवन का साक्षात्कार किया है। गजल को आशिक और माशूका, साकी और प्यालों के तंग दायरों से निकालकर उसे खास हिंदी का रूप- रंग देने की जो परंपरा चली उसमें वह अधिक से अधिक जीवन के विशेषतः सामाजिक जीवन के निकट आती गई और दुष्यंत कुमार के बाद से तो उसका किसान चेहरा, राजनीतिक चेहरा, क्रांतिकारी चेहरा और निखरता गया है और उसे निखारने वाले युवा गजलकारों में वशिष्ठ अनूप का खास योगदान है।उनकी गजलों में सत्ता की राजनीति के 'शातिर शिकारियों' की पहचान है तो उनके खिलाफ़ असंतोष, विरोध, आंदोलन और क्रांति का आह्वान भी है। कहीं धार्मिक, सामाजिक पाखंडों के विखंडन का कबीराना अंदाज है तो कहीं पर्यावरण की गहरी चिंता है-**

लाख हाथों जगत को जकड़े है

जग को मिथ्या बता रहा है वो

ये न समझो कि काटता जंगल

सबकी सांसें चुरा रहा है वो।"

वशिष्ठ अनूप जी ने अपनी गजलों में समाज की बातें समाज की भाषा में कहीं। गजलों में उर्दू प्रधान शब्द होते हैं लेकिन वशिष्ठ अनूप जी ने उन्हीं उर्दू शब्दों का प्रयोग किया जो हिंदी में घुल-मिल गए। **डॉ अवधेश प्रधान के शब्दों में- उनकी गजलों की एक बड़ी विशेषता है भाषा और भाव की सादगी।**उन्होंने भाषा के संदर्भ में एक ग़ज़ल भी कहीं-

अपनी भाषा घी शक्कर सी होती है

गैर की भाषा बोलेगा हकलाएगा ।।

जिस प्रकार नागार्जुन अपनी कविता 'प्रतिबद्ध हूं' में जनता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जाहिर करते हुए लिखते हैं-

प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ, प्रतिबद्ध हूँ-

बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त -

संकुचित स्व की आपाधापी के निषेधार्थ

अविवेकी भीड़ की 'भेड़िया-धमान' के खिलाफ

अंध-बधिर 'व्यक्तियों' को सही राह बतलाने के लिए

अपने आप को भी 'व्यामोह' से बारंबार उबारने की खातिर

प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ, शतधा प्रतिबद्ध हूँ ![iii]

इसी प्रकार अनूप वशिष्ठ गजलों में अपनी प्रतिबद्धता कई जगह पर व्यक्त करते हुए दिखते हैं-

निगाहों में निगाहें डाल सच कहने की आदत है,

जमाने की तरह से मुझको ऐयारी नहीं आती।

अनूप वशिष्ठ के लिए समाज में बदलते मानवीय मूल्य,स्त्री की दशा और दिशा, अकेलापन,आए आम आदमी की पीड़ा आदि को अपनी गजलों में व्यक्त किया है। मानवीय मूल्य समाज में रहने वाले मनुष्य को सही दिशा देकर उसके विकास में सहायक सिद्ध होते हैं। हर युग में मानवीय मूल्य बदलते हैं परंतु वर्तमान समय में सकारात्मक मूल्य जैसे सत्य अहिंसा आदि का पतन हो रहा है और फरेब, हिंसा, छल, अन्याय आदि की प्रवृत्ति बढ़ रही है। मनवीय मूल्यों के अभाव के कारण ही मनुष्यों का जीवन कष्टों से घिरा है। मनुष्य अपने मूल्यों को भूलकर अमानवीय होते जा रहे हैं। छल, प्रपंच आदि मनुष्य के मूल्य हो गए हैं। बौद्धिकता की अति होने के कारण इंसान में मानवीयता समाप्त होती जा रही है....

वफा इंसानियत इश्को मोहब्बत

ये सब बेकार होता जा रहा है।[iv]

जिस प्रकार दुष्यंत कुमार भ्रष्टाचार,अन्याय इत्यादि के खिलाफ प्रतिरोध की बात करते हुए कहते हैं-

मेरे सीने में ही नहीं तो तेरे सीने में ही सही

हो कहीं भी आग लेकिन आग जलनी चाहिए।[v]

लगभग उसी प्रकार का प्रतिरोध हमें वशिष्ठ अनूप की गजलों में देखने को मिलता है-

कोई अंगार दिल को दग्ध करता है बहुत दिन तक,

न हो यह आग तो शब्दों में चिंगारी नहीं आती।।

वशिष्ठ अनूप की गजलें समसामयिक मुद्दों पर तीखा प्रहार करती हैं। आज हमारे देश में भ्रष्टाचार चरम स्तर पर है। ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल रिपोर्ट के अनुसार 2023 के लिए भ्रष्टाचार धारणा सूचकांक में भारत 180 देश में से 93 वें स्थान पर है। आज समाज में बिकने की प्रवृत्ति आम हो गई है। परीक्षाओं की पारदर्शिता पर लगातार सवाल उठ रहे हैं। इसी समस्या को उठाती हुई वशिष्ठ अनूप की गजल-

ये समझना बहुत ही मुश्किल है

कौन सच्चा है, कौन झूठा है।

जो भी चाहे खरीद सकते हो

अब तो सब कुछ यहां पे बिकता है।[vi]

अब समाज में हर चीज का आधार पैसा बन गया है। व्यक्ति के आचरण को परखने की कसौटी धन बन रहा है।

इसी बात का प्रतिरोध करते हुए वशिष्ठ अनूप कहते हैं कि आज भी मानवीय मूल्यों को पैसों से नहीं खरीदा जा सकता। आत्मसम्मान भरा जीवन व्यक्ति के आचरण पर निर्भर करता है, भौतिक साधनों की उपलब्धता पर नहीं। भौतिक सुख की निरर्थकता पर गजलकार लिखते हैं-

हजारों महल बनवा लो बहुत सी गाड़ियां ले लो,

अगर किरदार बोना हो तो खुद्दारी नहीं आती।[vii]

आधुनिक दौर की एक बड़ी समस्या है "पारिवारिक संबंध"। **वसुधैव कुटुंबकम्** अर्थात् संपूर्ण विश्व हमारा परिवार है,की भावना रखने वाला देश आज अपने ही परिवार में अलगाव महसूस कर रहा है आधुनिकता के दौर में जहां हर संबंध उपयोगिता पर टिका है,आपसी प्रेम को समाप्त कर रहा है। भौतिक सुख सुविधाओं के पीछे दौड़ते दौड़ते मनुष्य की सोच भी बाजारू हो गई है। वह प्रेम, त्याग, परोपकार, विश्वास के नातों को बाजार की तरह उपयोगिता के स्तर पर आंक रहा है। इसी समसामयिक समस्या की ओर इशारा करते हुए गजलकार अनूप वशिष्ठ लिखते हैं-

चलो बाजार से आ गए, पर

ये घर बाजार होता जा रहा है।[viii]

स्वतंत्रता के बाद लगातार शहरीकरण बढ़ रहा है मनुष्य रोजगार एवं उच्च जीवन स्तर के लिए लगातार शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। इनको शहरों मैं रोजगार तो मिल रहा है लेकिन इनको लगातार अजनबीपन, अलगाव की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। शहरों का जीवन **अभिशप्त वरदान** है अर्थात वहा भौतिक सुख सुविधा तो प्राप्त होती है, परंतु कुंठा, ईर्ष्या, घुटन आदि का सामना ता है। गजलकार अनूप वशिष्ठ इसी समस्या को अपनी गजलों में गंभीरता से उठाते हैं।

चंद सिक्कों पर बिका प्यार तुम्हें कैसा लगा,

मेरे शहर का कारोबार तुम्हें कैसा लगा ?[ix]

महानगर में रहने वाले व्यक्ति का आचरण विचित्र है । वह दोहरा व्यक्तित्व रखता है। महानगरीय जीवन **स्वर्ण पिंजर** है जो बाहर से लुभावना लगता है परंतु अंदर से नीरस,सौंदर्य रहित है। महानगर एक ऐसा कारागार है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अदृश्य रूप से कैद है। वह विभिन्न बंधनों से तो आजाद है लेकिन अपने ही बंधनों में बंधा हुआ है।

हर घड़ी आपदाओं का घेरा ना था
आदमी इस तरह अकेला न था
थोड़ा-थोड़ा उजाला था हर द्वार पर
रोशनी कम थी यूं अंधेरा ना था
लोग लड़ भिड़के भी साथ रह लेते थे
इस तरह से कभी तेरा-मेरा ना था।।[x]

पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण आज हमारे देश में बड़ी समस्या बनती जा रही है। लोग आधुनिकता के नाम पर अपनी सभ्यता, संस्कार, आदर्श आदि को रूढ़िवादी कहकर लगातार नकारते जा रहे हैं। भारतेंदु जी ने **भारत दुर्दशा** नाटक में भारत की दुर्दशा के जिन चार कारणों(अपव्यय,

अदालत, फैशन, सिफ़ारिश) का वर्णन किया है, उन्हीं में से एक फैशन की सभ्यता का जिक्र करते हुए वशिष्ठ अनूप जी लिखते हैं-

कोई फैशन में नंगा है ,कोई नंगा विवशता में
तमाशा देखने वालों की हैरानी का क्या मतलब।।[xi]

गजलकार अनूप वाशिष्ठ लोगों की संवेदनहीनता पर भी तीखा प्रहार करते हैं कि लोग गरीबी को भी मजाक का विषय बनाते हैं।

वर्तमान समय में एक समस्या बच्चों के बचपन का छिन जाना है। मनुष्य लगातार भौतिक वस्तुओं के पीछे दौड़ रहा है। उपभोक्तावादी वस्तुओं ने बच्चों से उनका बचपन छीन लिया है। इलेक्ट्रॉनिक खिलौने, कार्टून,वीडियो गेम,इंटरनेट आदि ने बच्चों को कमरे में बंद करके उनके प्राकृतिक विकास को रोक दिया है। यह स्थिति हमारी नई पीढ़ी के लिए खतरनाक है। पहले बच्चे परिवार के सदस्यों के बीच बैठकर, खेलकर अपना समय व्यतीत करते थे, जिससे उनका संतुलित शारीरिक व मानसिक विकास होता था तथा रिश्तों की सही पहचान होती थी। इसी समसामयिक समस्या पर गजलकार अनूप वशिष्ठ अपनी चिंता जाहिर करते हैं-

बच्चों के जीवन से जाने बचपन कहां गया

वह रोना-धोना, जिद्दियाना कहा गया,?

बच्चे भी अब बच्चों जैसी बात नहीं करते

खेल खिलौने दूध-भात का आंगन कहां गया?

सुबह शाम की धमा-चौकड़ी, गोली, गुल्ली-डंडा कहां गया

डाल डाल पर ओला- पाती मधुबन कहां गया ?[xii]

गजलकार अनूप वशिष्ठ समसामयिक समस्या **नारी शोषण** को अपनी गजलों के माध्यम से प्रखर रूप से उठाते हैं। द्रोपती का चीर हरण महाभारत तक सीमित नहीं बल्कि आज का दुशासन पौराणिक दुशासन से भी ज्यादा अमानवीय, संवेदनहीन है। ये बड़े दुर्भाग्य की बात है जहां

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता अर्थात जहां नारियों की पूजा होती है वहां देवता निवास करते हैं वाले देश में स्त्रियां ही सुरक्षित नहीं है।

परंतु इस बदलते युग को लेकर आलोचक व गजलकार **वशिष्ठ अनूप** लिखते हैं- "**समकालीन हिंदी गजलों में स्त्री समुदाय की यथास्थिति, शोषण, दमन और वर्जनाओं के साथ ही उनकी परिवर्तनकामी आकांक्षाओं और प्रतिरोधी विचारों को भी बेहतर अभिव्यक्ति मिल रही है।**"

गजलकार अनूप वशिष्ठ **नारी सशक्तिकरण** की बात करते हुए अपनी अस्मिता की रक्षा स्वयं नारियों से करने की बात कह रहे हैं-

जरूरी है कि द्रोपदिया स्वयं बांधे कमर

दुशासन छोड़ दे तो कृष्ण पट ले भाग जाएंगे।[xiii]

सब समस्याओं के मूल में है **शिक्षा।** शिक्षित समाज देश की तरक्की में अपना योगदान देता है। भारत कभी जब **विश्व गुरु** के पद पर आसीन था तो यह **सोने की चिड़िया** कहलाता था। लेकिन आज के दौर में शिक्षा केवल ढोंग बन कर रह गई है। राजनीतिक नेता केवल झूठे वादे करते हैं। इसी डिजिटलीकरण के दौर में भी हमारे देश में कॉपी किताब मुहैया नहीं करा पा रहे हैं। इस समसामयिक मुद्दे पर वशिष्ठ अनूप की गजल राजनीतिक नेताओं के दोहरे चरित्र पर तीखा व्यंग्य करती है-

जहां बिजली नहीं, कॉपी किताब भी नही मिलती।

हमारे रहनुमा कंप्यूटरों की बात करते हैं ।।[xiv]

[i] दुष्यंत कुमार, साये में धूप, पृष्ठ संख्या 13

[ii] वाशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृष्ठ 1

[iii] प्रतिनिधि कविताएं, संपादक नामवर सिंह, पृष्ठ 15

[iv] वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोंपले, पृष्ठ 11

[v] दुष्यंत कुमार, साये में धूप, पृष्ठ संख्या 30

[vi] वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृष्ठ 62

[vii] वशिष्ठ अनूप, मशालें फ़िर जलाने का समय है, पृष्ठ 12

[viii] वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोंपले, पृष्ठ 11

[ix] वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृष्ठ 44

[x] वशिष्ठ अनूप, मशालें फिर जलाने का समय है, पृष्ठ 28

[xi] वशिष्ठ अनूप, तेरी आंखें बहुत बोलती हैं, पृष्ठ 39

[xii] वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोंपले, पृष्ठ 60

[xiii] वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृष्ठ 5

[xiv] वशिष्ठ अनूप, मशालें फिर जलाने का समय है, पृष्ठ 22